भगवान महावीर के समसामयिक श्रमण-धर्मनायक एवं उनके सिद्धान्त

- सोहनराज कोठारी
भूतपूर्व जिला न्यायाधीश, राजस्थान

भगवान महावीर का युग धार्मिक मतवादों और कर्मकाण्डो से संकुल था। बौद्ध साहित्य (सुत्तनिपात) के अनुसार उस समय तिरेसठ श्रमण सम्प्रदाय विद्यमान थे। जैनागमों (नंदी सूत्र ७६) में तीन को तिरेसठ धर्ममत वादों का उल्लेख मिलता है। यह भेदोपभेद की विस्तृत चर्चा है। प्राग ऐतिहासिक काल से भारतवर्ष में ब्राह्मण संस्कृति व श्रमण संस्मृति, ये दो धाराएं प्रवाहित होती रही है। ईश्वर को कर्त्ता के रूप मे स्वीकार करने उसके प्रति सर्वथा समर्पित रहने की भावना जहां ब्राह्मण संस्कृति का प्रमुख सिद्धान्त रहा, वहीं प्रत्येक प्राणी की स्वतंत्र आत्मा और आत्मा ही उसके सुख-दुख-कर्त्ता है का सिद्धान्त श्रमण संस्कृति का मुख्य सिद्धान्त रहा। एक में भक्तिभाव, श्रद्धा, समर्पण आदि को प्रमुखता दी गई व दूसरे में कर्म, ज्ञान, पुरुषार्थ को प्रमुखता दी गई हालांकि भक्ति, कर्म, ज्ञान तीनों योगों का समावेश दोनों संस्कृतियों में तारतम्यता के भेद के उपरांत भी समान रूप से समाहित किया गया। श्रमण संस्कृति की भी अनेक धाराएं रही हैं। उनमें सबसे प्राचीन धारा भगवान ऋषभ की और सबसे अर्वाचीन धारा भगवान बुद्ध की है। शेष सब धाराएं मध्यवर्ती हैं।

बैदिक और पौराणिक दोनो साहित्य विद्याओं में भगवान ऋषभ श्रमण धर्म के प्रवर्तक के रूप में उल्लिखित हुए है। भगवान ऋषभ का धर्म विभिन्न युगों में विभिन्न नामों से अभिहित होता रहा है। इतिहास के पृष्ठों में समय-समय पर उसका नाम व्रात्य धर्म, श्रमण धर्म, आर्हत धर्म, निग्रंथ धर्म कहलाता रहा है। भगवान महावीर को बौद्ध ग्रन्थों में "निर्ग्रय ज्ञात पुत्र" के नाम से संबोधित किया गया है। उनके निर्वाण की दूसरी शताब्दी में वह जैन धर्म के नाम से प्रसिद्ध हो गया। भगवान महावीर के जीवनकाल में श्रमणेां के

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चालीस से अधिक सम्प्रदाय थे, जिनमें पांच वहुत प्रभावशाली थे - (१) निर्ग्रंथ - महावीर का शासन (२) शाक्य - बुद्ध का शासन (३) आजीवक - मंखली गोशालक का शासन (४) गैरिक - तापस (पूरण कश्यप एवं संजय चेलट्ठिपुत्र के) शासन (५) परिव्राजक - अजित केशकवली एवं पकुध कात्यायन के शासन। वौद्ध साहित्य में वौद्ध धर्म के सिवाय छः सम्प्रदायों व उनके आचार्यों का इस प्रकार उल्लेख मिलता है - (१) अक्रियावाद - आचार्य पूरण कश्यप (२) नियतिवाद - मंखली गोशालक (३) दच्छेदवाद - अजित केशकंबली (४) अन्योन्यवाद - पकूध कात्यायन (५) चातूर्याम संवरवाद - निर्ग्रथ ज्ञातपुत्र (६) विक्षेपवाद - संजयवेलसिट्ठ पुत्र। ये सभी आचार्य अपने को तीर्थंकर बताते थे व उन्हे भी अर्हत नाम से लोग संबोधित करते थे। वे सभी सैद्धान्तिक मतभेदो के कारण एक दूसरे के प्रतिद्वन्दी थे। आचार्य पूरण कश्यप, अजित केशकम्वली, पकुध कात्यायन, संजयवेलट्ठिपुत्र के मत-सम्प्रदाय आगे न चलने के कारण उनके बारे में इतिहास में अधिक ज्ञातव्य तथ्य उपलब्ध नहीं है। मंखलीपुत्र गोशालक के भगवान महावीर का पूर्व में शिष्य रहने व बाद में विरोध करने के कारण जैनागमों मे उसके जीवनवृत्त व सिद्धान्तों का विस्तार से विवरण मिलता है। बौद्ध धर्म कुछ शताब्दियों तक भारत में प्रमुख रहा पर बाद में अनेक कारणों से वह भारत से लुप्त सा हो गया पर भारत के दक्षिण पूर्व देशों में उनका भारी प्रचार हुआ व आज भी विश्व के प्रमुख धर्मों में उसकी गणना की जाती है। कला, शिल्प, साहित्य आदि अनेक विद्याओं में उसके बारे मे विपुल सामग्री मिलती है। यह आज भी जीवन्त धर्म है। अनेक आरोहण-अवरोहण के उपरांत जैन धर्म इस देश में आज भी अपनी विशिष्टता रखता है और उसके सिद्धान्तों पर निरंतर साहित्य-सृजन गत अढ़ाई हजार वर्षों से होता रहा है। इतिहास के पृष्ठों में खो जाने के उपरांत भी अन्य धर्मनायको के सिद्धान्त की व्याख्या व चर्चा जैन एवं बौद्ध ग्रंथों में प्रचुर मात्रा में मिलती है और उसी के आधार पर उनके बारे में यहां उल्लेख किया जा रहा है जो इस प्रकार है।

(१) अक्रियावाद एवं उसके धर्मनायक आचार्य पूरण कश्यप

अक्रियावाद के प्रवर्तक आचार्य पूरण कश्यप के जीवन वृत्त के संबंध में कोई तथ्य नहीं मिलते, न उसके सिद्धान्तो के विषय में कहीं विस्तृत चर्चा मिलती है। बौद्ध ग्रंथ दीघांनकाय मे इस संबंध में किंचित चर्चा है जिसे धर्मानन्द कौशाम्वी ने अपनी पुस्तक "भारतीय संस्कृति और अहिंसा" में सार रूप मे प्रस्तुत किया है।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मगध सम्राट अजातशत्रु (कौणिक) ने पूरण कश्यप से उसके सिद्धान्तों के विषय मे जिज्ञासा की, तव उसमे अपने द्वारा स्वीकृत अक्रियावाद का विवेचन किया। पूरण कश्यप किसी क्रिया का फल स्वीकार नहीं करता था। उसका आशय था कि किसी भी क्रिया का प्रत्यक्ष फल होता है, वह तो है ही, पर भविष्य में कर्त्ता को कोई फल नहीं मिलता। हिंसा, असत्याभाषण, अदत्तादान, व्यभिचार से कोई पाप-बन्धन नही होता, न अहिंसा, सत्यभाषण, दान, तीर्थयात्रा एवं संयममय जीवन के अवलंवन आदि से पुण्य बंधन ही होता है। उसके इस सिद्धान्त से परलोक, स्वर्ग, नरक आदि मान्यताओं का स्वतः निरसन हो जाता है और इसीलिए फल में विश्वास न रखने के कारण उसके मत का नाम अक्रियावाद पड़ा।

जैनागम सूत्रकृतांग में क्रियावाद, विनयवाद एवं अज्ञानवाद के साथ अक्रियावाद का भी प्रावादुको - परतीथिकों या अन्य मतावलंवियों के सिद्धान्तों के रूप में उल्लेख हुआ है। सूत्रकृताग में प्रसंगवश अनेक स्थानो पर इसका संकेत मिलता है, जैसे एक स्थान पर कहा गया - भगवान महावीर क्रियावाद, अक्रियावाद, विनयवाद तथा अज्ञानवाद को भलीभांति समझकर उसका समीक्षण कर दीर्धकाल तक संयम की आराधना मे समुद्यत रहे। (सूवकृताग)। दशाश्रुतस्कंध आगम की पष्ट दशा में भी अक्रियावाद का उल्लेख है।

अक्रियावाद के संबंध में कहीं सुव्यवस्थित विचार श्रृंखला नही मिलती, केवल यत्र-तत्र छुटपुट तथ्य मिलते हैं। यह नही कहा जा सकता कि यह विचारधारा किस रूप में विकसित हूई व जीवन एवं धर्म के विषय में उसकी क्या मान्यताएं थी। पर यह निश्चित हे कि उसका विशद व समग्र स्वरूप अवश्य कुछ रहा होगा, क्योकि उस युग मे पूरण कश्यप के बड़ी संख्या में अनुयायी थे और महावीर एवं बुद्ध की तरह वह विश्रुत धर्मनायक था। मगध नरेश अजातशत्रु जैसे उस युग के प्रतापी एवं शीर्ष राजा का उसके सिद्धांतो के विषय में जिज्ञासा होना मात्र ही सिद्ध करता है कि उनका व्यक्तित्व महत्त्वपूर्ण था व उनका धर्मसंघ सुगठित एवं विशाल रहा होगा। आगे उसकी परंपरा कई कारणो से नही चल सकी, अतः उसकी पूरी विचारधारा इतिहास के पृष्ठों मे सुरक्षित नहीं रह पाई।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(२)संजय वेलट्ठिपुत्र व उसका सिद्धांत अनिश्चिततावाद

अनिश्चिततावाद का प्रवर्तक संजय वेलट्ठिपुत्र उस युग में अपने को तीर्थंकर बताता था और निर्ग्रंथ महावीर व तथागत बुद्ध का प्रतिद्वंदी था। उसने परलोक, देव, शुभअशुभ कर्मो का फल, मुक्त आत्मा का देहत्याग के बाद अस्तित्व आदि विषयों के संदर्भ में अनिश्चितावादी सिद्धान्त का निरूपण किया। धर्मानन्द कौशाम्बी लिखित पुस्तक "भारतीय संस्कृति और अहिंसा" के पृष्ठ ४६ पर उसके सिद्धान्तों का सार संक्षेप इस प्रकार मिलता है -

"परलोक है या नहीं, यह मैं नही जानता। परलोक है, यह भी नहीं, परलोक नहीं है यह भी नहीं। .... अच्छे बुरे कर्मो का फल मिलता है यह भी मैं नहीं मानता, नहीं मिलता है, यह भी मैं नहीं मानता। यह रहता भी है, नही भी रहता है। तथागत मृत्यु के बाद रहता है या रहता नहीं, यह मैं नही समझता। वह रहता है, यह भी नही, वह नहीं रहता है यह भी नही।"

यहां अस्ति, नास्ति, अस्ति-नास्ति, न अस्ति-न नास्ति - ये चार भंग या विकल्प बनते है जिसके आधार पर संजयवेलट्ठिपुत्र ने अनिश्चिततावाद का निरूपण किया। ऐसा लगता है कि जैन दर्शन के अनेकान्तवाद का तत्व बीज रूप में इसमे प्रकट हुआ है जिसे भगवान महावीर ने सुविचारित एवं सुव्यवस्थित स्वरूप प्रदान किया हो, किन्तु स्पष्ट रूप से अनिश्चिततावाद व उसके परिपार्श्व मे पल रही अन्य मान्यताओं की जानकारी के अभाव में, इस बारे में कुछ निश्चित नही कहा जा सकता।

(३)प्रकुधात्यायन व उसका सिद्धांत अकृततावाद

अकृततावाद का संप्रवर्तक, उपदेशक आचार्य प्रकुद्य कात्यायन अपने समय का प्रख्यात लोक-समादृत धर्मनायक था। उसने पृथ्वीकाय (पृथ्वीतस्व), अप्काय (जल तत्त्व), तेजस्काय (अग्नितत्व), वायुकाय (वायुतत्व), सुख, दुःख एवं जीव इन सात तत्त्वों की सत्ता स्वीकार की। उसके अनुसार ये सात अकृत है, किसी के द्वारा उनका निर्माण नहीं हुआ है अबध्य है, कूटस्थ हैं, स्तंभ की तरह अचल, अविकृत व अहानिकर है। (भारतीय संस्कृति और अहिंसा, पृष्ठ ४६-४७)।

ऐसा कोई तत्त्व नहीं है जो किसी का हनन कर सके धात कर सके। बौद्ध ग्रन्थों

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

में इस संबंध में प्राप्त विवेचन का यह संक्षिप्त सार है। प्रकुध कात्यायन ने जिन सात तत्त्वो की सत्ता स्वीकार की उनमे चार वे ही है जिन्हें अजितकेशकवली मानता था। सुख, दुःख तथा जीव (चैतन्य) - ये तीन तत्त्व प्रकुधकात्यायन ने अधिक माने। जीव या चैतन्य को, जो परोक्ष है, इन्द्रियातीत है, स्वीकार करने से सिद्ध होता है कि प्रकुध कात्यायन नितांत भौतिकवादी नही था। अध्यात्म की और भी उसका रुझान था।

(४) अजितकेशकंबल एवं उसका सिद्धांत उच्छेदवाद

'बौद्ध दर्शन मीमांसा' पुस्तक के पृष्ठ सं० २६ मे दीर्घनिकाय के आधार पर उच्छेदवाद सिद्धांत का सार संक्षेप निम्नलिखित प्रकार से उल्लिखित है -'न दान है, न यज्ञ है, न होम है, न पुण्य पाप का अच्छा बुरा फल होता हे। न माता है, न पिता है, न अयोनिज सत्त्व (देवता) है और न इस लोक में ज्ञानी और समर्थ ब्राह्मण श्रमण है, जो इस लोक और परलोक को जानकर तथा साक्षात्कार कर कुछ कहेंगे। मनुष्य चार महाभूतों से मिल कर बना है और जब मरता है तब पृथ्वी महापृथ्वी में लीन हो जाती है, जल-तेज-वायु - उनमें समाहित हो जाते है और इन्द्रियां आकाश में लीन हो जाती हैं। मनुष्य लोग लाश को सीढी में डालकर ले जाते हैं। उसकी निंदा प्रशंसा करते हैं। हड्डियां कबूतर की तरह उजली होकर बिखर जाती हैं और सब कुछ भस्म हो जाता है। मूर्ख लोग, जो दान देते हैं, उसका कुछ भी फल नहीं होता। आस्तिकवाद (आत्मा की सत्ता मानना) झूठा है। मूर्ख और पंडित - सभी शरीर के नष्ट होते ही उच्छेद को प्राप्त हो जाते है। मरने के बाद कोई नहीं रहता।'

उपर्युक्त विचारों के परिशीलन से प्रतीत होता है कि यह चार्वाक के भौतिकवाद का ही एक रूप था। उसके उपदेष्टा आचार्य अजितकेशकंबली माने जाते है जो चार्वाक मत का उदभावक धर्मनायक एवं प्रभावक आचार्य था। अजितकेशकम्वली का कोई इतिहास नहीं मिलता। उसके नामसे यह संभावना बनती है कि उसका नाम अजित रहा हो और सुविधा त्याग कर वह केशों से बुना रूक्ष अकोमल-सात्विक कम्वल धारण करता हो अतः उसकी विशिष्ट पहचान के लिए उसे अजितकेशकंवल कहा जाता हों। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता है कि उसमे विचार स्वातन्त्रय इतना व्यापक था कि उच्छेदवाद या चार्वाक मत को भी सिद्धान्त एवं दर्शन के रूप में चर्चित किया गया और उसके उपदेष्टा के विचारों को समादर दिया गया।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(५)मंखली गोशालक एवं उसका सिद्धांत नियतिवाद व आजीवक मत

भगवान महावीर तथा बुद्ध के समसामयिक आचार्यो में मंखली गोशालक अपने को तीर्थंकर बताता था। वह नियतिवादी था व उसका मत आजीवक कहलाता था। वह कर्म, पुरूषार्थ, उद्यम, प्रयत्न में विश्वास नहीं करता था। जो कुछ होता है, सब नियत है, पूर्व नियोजित है, ऐसा मानता था। उसके मत का कोई स्वतंत्र ग्रन्थ उपग्रन्थ नहीं है पर भगवान महावीर का पूर्व शिष्य होने व बाद में प्रबल विरोधी होने एवं उनकी सर्वज्ञता को चुनौती देने, वादविवाद पर उतर आने के कारण भगवती सूत्र के पन्द्रहवें शतक में उसकी उत्पत्ति, दीक्षा, कार्यकलाप आदि का विस्तृत विवरण मिलता है और भगवती एवं उपासक दशांस सूत्र व बौद्ध ग्रंथ मज्झिमनिकाय, अंगुत्तर विकाय में उसके सिद्धान्तो की विशद व्याख्या मिलती है।

भगवती सूत्र के अनुसार मंखजातीय मंखली चित्रपट दिखा कर भिक्षा मांगकर अपनी आजीविका चलाता था, गौशाला मे उसके पुत्र ने जन्म लिया जिसका नाम गोशालक रखा गया। बह बड़ा होने पर भगवान महावीर के संपर्क में आया व उनसे प्रभावित हो उनके पास दीक्षित हुआ। छः वर्ष तक उनके पास विद्याध्ययन कर शक्तिशाली तेजोलब्धि प्राप्त की और वह फिर भगवान महावीर से पृथक होकर अपने को जिन तीर्थकर, अंर्हत, सर्वज्ञ कहने लगा। उसे अष्टांग निमित्त का अच्छा ज्ञान था, अतः वह भविष्यवाणिया करने लगा व लोगों की जिज्ञासा शांत करता अतः उसके हजारों अनुयायी हो गये। भगवान महावीर की प्रतिष्ठा, प्रशस्ति और प्रभाव से उसे ईर्ष्या हो गई और उसने भगवान के समवशरण में आकर उन पर तेजोलब्धि का प्रयोग कर दिया, जिसे भगवान ने समभाव से प्रसन्नतापूर्वक सहन किया और भीषण अग्नि, ज्वाला से उन्हे शारीरिक कष्ट तो अवश्य हुआ पर वह उन्हें पराभूत नही कर पाई। तेजोलेश्या वापस लौटकर गोशालक के शरीर मे प्रवेश कर गई और उसके भीषण ताप से दाह ज्वर से पीड़ित होकर गोशालक सात दिन बाद मृत्यु को प्राप्त हो गया। इन सात दिनों में उसने चरम पान, गान, नाटय, अंजलिकर्म, पुष्कर-संवर्तक महामेघ, खेचवक ग्रधहस्ति, महाशिलाकंटक, संग्राम, चरम तीर्थंकरइन अष्ठ चरम तत्वो का आख्यान किया और प्रवृत्त परिहार नामक सिद्धांतो के माध्यम से जन्मांतरों की चर्चा की।

उपासकदर्शाय सूत्र के छठे अध्ययन मे कुण्डकौलिक श्रावक को साधनाच्युत

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

करने देव आया व उसने गोशालक के सिद्धांत को सही बताया तो कुण्डकौलिक ने उसे उचित समाधान दिया। इसी प्रकार सातवें अध्ययन में सकडाल पुत्र श्रावक, जो पहले गोशालक का श्रावक था व नियतिवादी था उसे भगवान महावीर ने कर्म और पुरूषार्थ का सिद्धान्त समझाया, का वर्णन है।

गोशालक और उसके धर्मसंघ के भिक्षु घोर तपस्वी व हठयोगी होते थे। उसका धर्मसंघ भगवान महावीर और बुद्ध के धर्मसंघों से विशाल था पर गोशालक के बाद उसकी परम्परा आगे नही चलं सकी, अतः उसकी स्वतंत्र परम्परा या सैद्धान्तिक ग्रंथ आज कहीं उपलब्ध नहीं है।

(६)गौतम बुद्ध और बौद्ध धर्म

कपिलवस्तु और देवदह के वीच नैपाल की तराई में नौतनवा स्टेशन से ८ मील दूर पश्चिम रूक्मिनदेई है, जहां तीन हजार वर्ष पूर्व लुम्विनी वन था। ईसा से ५६३ वर्ष पूर्व कपिलवस्तु की महारानी महामाया देवी अपने नैहर देवदह जा रही थी, तब उस वन में गौतम का जन्म हुआ जिसका नाम रखा गया सिद्धार्थ। जन्म के सात दिन वाद माता की मृत्यु हो जाने से सिद्धार्थ का लालन-पालन उसकी मौसी गौतमी ने किया। बचपन से ही सिद्धार्थ में करूणा का स्रोत अविरल बह रहा था। गुरू विश्वामित्र के पास सिद्धार्थ ने वेद और उपनिषदों का ज्ञान पढ़ा व युद्ध विद्या की शिक्षा प्राप्त की। सोलह वर्ष की उम्र में दण्डपाणि शाक्य की कन्या यशोधरा से उसका विवाह हुआ और उसके राहुल नाम का एक पुत्र हुआ। विपुल धनसंपद एवं ऐश्वर्य के साधनों के उपरांत भी सिद्धार्थ का मन भौतिक पदाथों में आसक्त नहीं हुआ। एक बार घूमने निकले तो नगर में एक बृद्ध, एक रोगी व एक शवयात्रा देखी जिन्हें देखकर बीमारी, बृद्धावस्था व मृत्यु की दारूण अवस्था का ज्ञान हुआ। फिर एक प्रसन्नचित्त सन्यासी के दर्शन हुए तो दुःखमुक्ति का उपाय सूझा।

भरे यौवन में अर्द्धरात्रि को राज्य-पाट, स्त्री, बच्चे, परिवार को छोड़ कर वे घर से निकल पड़े व संन्यास धारण किया। योग साधना व समाधि के पथ पर चल पड़े, पर संतोष नहीं हुआ। उग्र तपस्या की, पर उससे भी समाधान नहीं मिला। तब मध्यम मार्ग अपनाया। ३५ वर्ष की अवस्था मे वट वृक्ष के नीचे उन्हे बोधी प्राप्त हुई व तब से गौतम बुद्ध कहलाए। पहला धर्मोपदेश सारनाथ मे दिया। वे ८० वर्ष की अवस्था तक प्रचार करते रहे। सभी जाति-वर्ण के लोगों ने उनके पथ का अनुसरण किया। हजारों व्यक्तियों ने

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उनके पास भिक्षु की प्रव्रज्या ली। विदेशो में भी प्रचारार्थ भिक्षु-भिक्षुणियों को भेजा। ईसा से ४८३ साल पूर्व वैशाखी पूर्णिमा को उनका परिनिर्वाण हुआ।

बौद्ध धर्म ने मध्यम मार्ग का अनुसरण किया व चार आर्य सत्य (१) दुःख (२) दुःख का कारण (३) दुःख निरोध (४) दुःख निरोध का मार्ग स्थापित किए। दुःख निरोध के लिए अष्टांगिक मार्ग सम्यक ज्ञान, संकल्प, वचन, कर्मान्त, आजीव, व्यायाम, स्मृति और समाधि की प्रस्थापना की। बौद्ध धर्म की दो शाखाएं बाद में बनीं जिसमें हीनयान शाखा ने अष्टांगिक मार्ग पर जोर दिया व महायान शाखा ने छः परिमिता - दान, शील, शान्ति, वीर्य, ध्यान और प्रज्ञा के अनुपालन पर बल दिया। भगवान बुद्ध के पूर्व जन्मों का वर्णन जातक कथाओं में मिलता है व सिद्धांतों का विवेचन विनयपिटक, सुत्तपिटक व अभि धम्मपिटक में मिलता है। धम्मपद में पुरूषार्थ व संयम पर स्थान-स्थान पर बल दिया गया है। चीन, जापान व दक्षिण पूर्व एशिया में बौद्ध धर्म के करोड़ों अनुयायी आज भी हैं और श्रमण संस्कृति के सबसे जीवन्त व प्रखर धर्म के रूप सारे विश्व में बौद्ध धर्म फैला हुआ है।

Jain Education International 2010_03 For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org